डाक पंजीयन संख्या : बीकानेर/068/2021-23
REG. NO. RAJHIN/2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चोखी खेती

जुलाई 2022 ई-संस्करण

वर्षा जल भण्डारण, संरक्षण एवं समुचित उपयोग

प्रो. (डॉ.) रक्षपाल सिंह
कुलपति, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

राजस्थान प्रदेश जैसे शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में साधारणतया वर्षा कम, अनियमित, अनिश्चित तथा कम समय के लिए होती है। ऐसे में मानसून/वर्षा ऋतु का कितना महत्व है यह हम समझ सकते हैं। वर्षा जल प्रकृति की अमूल्य देन है। वर्षा की कमी, वर्षा दिनों की न्यूनता एवं असमान वितरण के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि वर्षा जल का समुचित संग्रहण, जल भण्डारण संरचनाओं के निर्माण एवं रख–रखाव पर पूरा ध्यान दिया जाए ताकि जलाभाव की परिस्थितियों में पेयजल और कृषि कार्यों व फसलों आदि को जीवनदायी सिंचाई देकर बचाया जा सके। वर्षा जल के समुचित भण्डारण की परम्परागत संरचनाओं एवं भण्डारण सम्बन्धित जानकारी को साझा करना ही इस लेख का उदेश्य है।

शुद्ध पेयजल, पृथ्वी पर उपलब्ध जल का मात्र एक प्रतिशत हिस्सा ही है। 97 प्रतिशत जल महासागर में खारे पानी एवं शेष दो प्रतिशत जल बर्फ को रूप में जमा हुआ है। अतः वर्षा की कमी, वर्षा दिनों की न्यूनता एवं असमान वितरण प्राप्त होने वाली वर्षा के कारण यह आवश्यक है कि वर्षा जल का समुचित संग्रहण करने हेतु जल भण्डारण संरचनाओं के निर्माण एवं रख–रखाव की जानकारी हो। भू–जल को जल बैंक के रूप में जाना जाता है और इसके पुनर्भरण हेतु उचित उपाय भी करने चाहिए।

भारत के सभी प्रान्तों में वर्षा जल को संग्रहित कर उपयोग में लेने की प्राचीन परम्पराएं चली आ रही हैं। अलग अलग स्थानों पर जल का संग्रहण, वहां की भौगोलिक स्थिति, जलवायु, वार्षिक औसत, वर्षा भूजल की गहराई एवं गुणवत्ता के आधार पर अलग–अलग पारंपरिक तरीकों से किया जाता है। जल संग्रहण की भंडारण संरचनाएं दो प्रकार की होती है– वर्षा जल आधारित एवं भूमिगत जल आधारित। राजस्थान में वर्षा जल आधारित संरचनाओं में टान्का, नाड़ा, नाड़ी जोहड़, खडीन, तलई, तालाब, सर, सागर एवं समंद आते हैं। खाड़ीन, अतिशुष्क (राजस्थान– जैसलमेर) – कंकरीली व पथरीली जमीन से बहे वर्षा जल को मिट्टी का बांध बनाकर तलहटी में एकत्र करके संरक्षित नमी पर खेती करना। टांका, नाडी, बावडी, कुंड, कुई वर्षा जल को संग्रहित कर पेयजल हेतु उपयोग किया जाता है।

अन्य राज्यों में जल संग्रहण संरचनाओं को अलग–अलग नामों से जाना गया है जैसे महाराष्ट्र में बंधारा और ताल, मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश में बंधी, हिमाचल में कुहल, बिहार में आहर और पइन तमिलनाडु में दूरी, केरल में सुरंगम, कर्नाटक में कट्टा तथा राजस्थान में खडीन, टांका और बावड़ी आदि में पानी को सहेजने व संरक्षित करने के कुछ प्राचीन साधन हैं।

एक अध्ययन के

आधार पर यह कहा गया है कि हमारे देश के कुल जल संसाधनों का लगभग 80 प्रतिशत जल, कृषि संबन्धित कार्यों में प्रयुक्त होता है। भारत में वार्षिक वर्षा से कुल 400 मिलियन हेक्टेयर मीटर पानी प्राप्त होता है जिसका 17.5 प्रतिशत भाग वाष्पीकरण द्वारा उड़ जाता है तथा लगभग 40 प्रतिशत भाग सतही बहाव के द्वारा नदियों से होता हुआ समुद्र में चला जाता है। अतः पर्याप्त मात्रा में वर्षा जल संग्रहण के लिए उपलब्ध है जिसका प्रभावी ढंग से संचय कर जल संसाधनों को विकसित किया जा सकता है। एक अनुमान के अनुसार कुल संभावित 24. 19 मिलियन हेक्टेयर मीटर सतही बहाव जल का लगभग एक चौथाई भाग तालाबों, प्रक्षेत्र पौण्ड एवम् अन्तः सतही टाकों आदि में संग्रहित किया जा सकता है।

जल संग्रहण के कुप्रबंधन के कारण और कारगर नीति के अभाव में हम जल संचय, संरक्षण व प्रबंधन में सफल नहीं हो पा रहे हैं । अंधाधुंध भूजल उपयोग से जल संकट की भीषण समस्या, हमारे सामने खड़ी है। हमारे देश में भूतल व सतही विभिन्न माध्यमों से पानी की उपलब्धता 2,300 अरब घनमीटर है और जहां नदियों का जाल बिछा है इसके अलवा सालाना औसत बारिश 100 सेमी से भी अधिक होती है, जिससे 4,000 अरब घनमीटर पानी मिलता है। इसके उपरांत भी वहां पानी का अकाल है तो हम समझ सकते हैं कि कमी कहाँ है? बारिश से मिलने वाले पानी में से 47 फीसदी यानी 1,869 अरब घनमीटर पानी नदियों में चला जाता है। इसमें से 1,132 अरब घनमीटर पानी उपयोग में लाया जा सकता है। इसमें से 37 फीसदी उचित भंडारण–संरक्षण के अभाव में समुद्र में बेकार चला जाता है। यदि इसी जल को रिचार्ज के लिए संरक्षित किया जाए, तो देश में पानी का कोई संकट नहीं होगा। हमें सरकारी सिस्टम पर आश्रित नहीं होना है। जल प्रबंधन, सामुदायिक ज़िम्मेदारी है। जल संचय के हमारे परंपरागत तरीकों की अनदेखी के कारण शहरों व गांवों में झीलों–तालाबों और कुओं पर अतिक्रमण हो रहा है।

वर्षा जल के भूमि में संग्रहण हेतु कृत्रिम पुनर्भरण तकनीकों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। जैसे– उन क्षेत्रों में सतत भू–जल दोहन बनाये रखना जहां अति भू–जल दोहन से स्त्रोतों में जल की कमी हो गयी हो, भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अतिरिक्त सतही जल का भूमिगत भण्डारण एवं संरक्षण करना हो, भू–जल की गुणवत्ता सुधारने के लिए लवणों की सान्द्रता में कमी करने तथा भू–जल की उपलब्धता बढ़ाने के लिए अपशिष्ट जल को प्रदूषण मुक्त करके पुनः उपयोग में लाने का उद्देश्य सम्मिलित हो, शहरी क्षेत्रों के लिए भी भवनों की छत से प्राप्त जल संचयन एवं भू–जल पुनर्भरण के लिए पुनर्भरण शाफ्ट, शाफ्ट के साथ पुनर्भरण बोरहोल पुनर्भरण कूप तथा नलकूप आदि संरचनाएँ काम में लाई जानी चाहिए ताकि वर्षा जल व्यर्थ बहकर न जाए।

सिंचाई में कुशलता बढ़ाने के साथ–साथ कम जल उपयोग वाली तथा कम अवधि में पकने वाली फसलों / किस्मों का चयन करना चाहिए। सिंचाई की पारंपरिक विधियों की तुलना में सूक्ष्म सिंचाई विधियों का प्रयोग कर न केवल 40 से 70 प्रतिशत तक जल बचाया जा सकता है, अपितु उत्पादन की मात्रा एवं गुणवत्ता में भी सुधार लाया जा सकता है। सिंचाई के अलावा, संग्रहित जल में मछली पालन, झींगा पालन, बतख पालन करके किसान की आमदनी बढ़ाई जा सकती है।

भूजल समुचित मात्रा में रिचार्ज होना आवश्यक है , ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में पानी का दोहन नियंत्रित हो, संरक्षण हो, भंडारण हो, ताकि वह जमीन के अंदर प्रवेश कर सके। जल संग्रहण व संरक्षण तभी सफल हो पाएगा जब समाज के सभी पक्षों की भागीदारी सुनिश्चित की जाएगी। मानसून में वर्षा जल से गांवों कस्बों शहरों में नई सड़के टूट रही हैं, अनावश्यक वर्षा जल एकत्र हो रहा है, बिना योजना के छोटे–बड़े शहरों में सड़कों व खुले स्थानों को सीमेंट आदि से पक्का कर दिया जाता है तो भूजल स्तर कैसे बढ़ेगा? आइए हम सब मिलकर रेन वाटर हार्वेस्टिंग, भूजल पुनर्भरण की दिशा में आगे बढ़ें और वर्षा जल का संचय कर एक सच्चे नागरिक होने का कर्तव्य निभाएँ, वर्षा जल संग्रहण और संरक्षण ही एकमात्र रास्ता है। जल संग्रहण हेतु खेत का पानी खेत में, गाँव का पानी गाँव में जैसे कार्यक्रमों का व्यापक असर देखने को मिल रहा है। आइए हम सब मिलकर रेन वाटर हार्वेस्टिंग, भूजल पुनर्भरण की दिशा में आगे बढ़ें और जल संग्रहण मिशन से जुड़कर एक सच्चे नागरिक होने का कर्तव्य निभाएँ ।

भारतीय कृषि में ड्रोन का उदय : सम्भावनाएं और सीमाएं

केशव मेहरा[1], सुभाष चन्द्र[2], दुर्गासिंह[1] एवं शिशपाल[1]

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की हमेशा से आधारशिला रही है। भारत की अधिकाँश जनसंख्या खासकर ग्रामीण क्षेत्रों के लिए मुख्य आजीविका का साधन आज भी कृषि है। देश की लगभग आधी आबादी आज भी कृषि पर आश्रित है। कृषि और किसानों के कार्यों की अहमियत कोरोना महामारी के संकट में पूरे देश ने महसूस की । भारतीय कृषि, प्रौद्योगिकी के इस दौर में तेजी से प्रगति कर रही है। पिछले कुछ वर्षों में, कृषि में ड्रोन के उपयोग को प्रमुखता मिली है और विभिन्न संस्थान कृषि में इसकी उपयोगिता की जाँच करने में लगे हुए हैं। इसलिए आवश्यक है कि सभी किसानों को ड्रोन से सबंधित जानकारी समय–समय पर मिलती रहें। ड्रोन का कृषि मे विभिन्न कार्यों हेतु उपयोग किया जा सकता है जैसे –

कीटनाशकों का छिड़काव

कृषि में ड्रोन का उपयोग कर कीटनाशक छिड़काव जैसे महत्वपूर्ण कार्य को अधिक कुशल और सुगम बनाया जा सकता है। पारंपरिक तरीकों जैसे ट्रैक्टर या पंप के माध्यम से कीटनाशकों के छिड़काव में बहुत अधिक पानी तथा कीटनाशक की बर्बादी होती है, जबकि ड्रोन के माध्यम से कीटनाशकों के छिड़काव करने से पानी और कीटनाशक दोनों की खपत में कमी आएगी। ड्रोन की उपयोग से किसानों की लागत में कमी आएगी साथ ही कम समय में अधिक क्षेत्रफल पर छिड़काव किया जा सकेगा ।

फसल की निगरानी

ड्रोन टेक्नोलॉजी में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के शामिल होने से फसल की विभिन्न महत्वपूर्ण अवस्थाओं पर निगरानी की जा सकती है। फसल की लंबाई ज्यादा होने से किसानों को निगरानी करना कठिन हो जाता है, ऐसे में ड्रोन फसलों की निगरानी करने में मदद करता है। ड्रोन के उपयोग से खेत की सिंचाई पर निगरानी रखी जा सकती है। ड्रोन में लगे हाइपर–स्पेक्ट्रल, मल्टीस्पेक्ट्रल, या थर्मल सेंसर उन क्षेत्रों की पहचान कर सकते हैं जो कि शुष्क हैं, इसके उपयोग से किसान खेत के पूरे क्षेत्र मे बेहतर सिंचाई कर सकते हैं।

फसल के नुकसान का आंकलन

प्राकृतिक आपदा जैसे अधिक वर्षा, सूखा या कीट–बीमारी का प्रकोप होने पर फसल नुकसान का आंकलन किया जा सकता है । ड्रोन के माध्यम से कम समय में अधिक क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया जा सकता है, जिससे किसानों को जल्द से जल्द मदद मिल पायगी। इसमे लगे सेंसेर की मदद से किसान पता कर सकते हैं कि खेत के कौन से भाग में फसल का ज्यादा नुकसान हुआ है।

फसल की सेहत

ड्रोन का उपयोग फसल स्वास्थ्य की निगरानी करने में भी किया जाता है। ड्रोन में लगे सेंसर की सहायता से विभिन्न पोषक तत्वों की कमी की पहचान आसानी से कर सकते हैं और समय रहते ड्रोन के माध्यम से उनका छिड़काव किया जा सकता है। फसल से कितना उत्पादन प्राप्त होगा इसका भी सटीक अंदाजा लगाया जा सकता है। खेत में खरपतवार, कीटों और बीमारियों से प्रभावित क्षेत्रों का पता लगाने में भी यह मदद करता है।

ड्रोन के माध्यम से छिड़काव के पहले, दौरान और बाद में निम्नलिखित सावधानियों का पालन किया जाना चाहिए –

छिड़काव से पहले

- सबसे पहले यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि आपका कृषि क्षेत्र ड्रोन निषिद्ध

1. कृषि विज्ञान केन्द्र, बीकानेर, 2. निदेशक प्रसार शिक्षा, प्रसार शिक्षा निदेशालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

क्षेत्र में है या नहीं। ग्रीन जोन में संचालन के लिए किसी पूर्व अनुमति की आवश्यकता नहीं होती है। नॉन ग्रीन जोन (हवाई अड्डे के पास, इलेक्ट्रॉनिक स्टेशन) में उड़ान भरने के लिए सक्षम विभाग से अनुमति लेना आवश्यक होता है।

- ड्रोन अच्छी अवस्था में होना चाहिए, साथ ही यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि टैंक से किसी प्रकार का रिसाव नहीं हो और ड्रोन की बैटरी पूरी तरह चार्ज हो।
- ड्रोन ऑपरेटर, ड्रोन उड़ाने और कीटनाशक छिड़काव दोनों में प्रशिक्षित होना चाहिए।
- कीटनाशक के लेबल के अनुसार सटीक मात्रा में छिड़काव करने के लिए नोजल आउटपुट सुनिश्चित करने के लिए ड्रोन स्प्रेइंग सिस्टम को अच्छी तरह सेट कर लेना चाहिए ।
- टेक ऑफ, लैंडिंग और टैंक मिक्स ऑपरेशन कि लिए एक निश्चित स्थान जो कि समतल हो उसकी पुष्टि कर लेना चाहिए ।
- कीटनाशक छिड़काव के लिए प्रस्तावित कृषि क्षेत्र की जाँच कर उसे चिन्हित कर लेना चाहिए ।
- कीटनाशक का छिड़काव पानी के स्रोत के पास नहीं करना चाहिए । पानी का स्रोत छिड़काव वाले स्थान से कम से कम 100–150 मीटर की दूरी पर करना चाहिए ताकि पानी को प्रदूषित होने से बचाया जा सके।
- स्थानीय कृषि अधिकारी / ग्राम सभा / ग्राम समिति को निर्धारित ड्रोन गतिविधि से 24 घंटे पहले सूचित किया जाना चाहिए।
- ड्रोन ऑपरेटर और किसान को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि छिड़काव के समय निर्धारित छिड़काव क्षेत्र में कोई जानवर नहीं होना चाहिए और ना ही मानवीय गतिविधि होनी चाहिए ।
- कीटनाशक का छिड़काव मधुमक्खी के परागण के समय नहीं करना चाहिए।
- हवा की गति, तापमान और आर्द्रता के लिए मौसम की स्थिति की जाँच कर लेनी चाहिए अन्यथा यह स्थितियां छिड़काव दक्षता को प्रभावित करेंगी।
- कीटनाशक के छिड़काव से पहले, शुद्ध पानी (बिना रसायन के) से छिड़काव संचालन का परीक्षण कर लेना चाहिए।

छिड़काव के दौरान

- केमिकल के आंखों या नाक में जाने से बचाने के लिए पीपीई किट पहनना चाहिए।

- छिड़काव करते समय कुछ खाना–पीना या धूम्रपान नहीं करना चाहिए ।
- संचालन दल हमेशा कृषि क्षेत्र के निचले छोर पर रहना चाहिए ।
- पानी में कीटनाशक को पूरी तरह से घोलने के लिए दो चरणों में तनुकरण सुनिश्चित करना चाहिए ।
- अधिकतम छोटी बूंद स्पेक्ट्रम के लिए उचित दबाव अपनाएं।
- प्रभावी छिड़काव के लिए टैंक में पानी की मात्रा के साथ ड्रोन की उचित उड़ान ऊंचाई और गति सुनिश्चित करनी चाहिए।
- रसायन के अधिकतम उपयोग के लिए एंटी ड्रिफ्ट नोजल का प्रयोग करें।

छिड़काव के बाद

- छिड़काव के तुरंत बाद छिड़काव वाले क्षेत्र से ताजा हवा वाली जगह पर चले जाना चाहिए ।
- छिड़काव के लिए इस्तेमाल किए गए सभी कंटेनरों को धो लेना चाहिए।
- छिड़काव वाले कृषि क्षेत्र के बारे में लोगों को सूचित करने के लिए चेतावनी चिन्ह लगाएं और चिन्हित क्षेत्र में पशु तथा मानवीय गतिविधि नहीं होने देनी चाहिए ।

कृषि ड्रोन की कमियां या सीमाएं

- कृषि ड्रोन को संचालित करने के लिए बुनियादी ज्ञान और कौशल की आवश्यकता होती है। ड्रोन को उड़ने से पहले विशेष प्रशिक्षण लेना आवश्यक होता है ।
- अधिकांश ड्रोन में उड़ान का समय कम होता है और वे कम क्षेत्र को कवर करते हैं। लंबी उड़ान समय और लंबी दूरी वाले ड्रोन महंगे होते हैं।
- इसका उपयोग करने के लिए सरकारी मंजूरी प्राप्त करने की आवश्यकता होती है।
- यह विमानों के समान वायु क्षेत्र का उपयोग करता है और इसलिए यदि यह उनके उड़ान पथ में आता है तो मानवयुक्त विमानों के साथ हस्तक्षेप कर सकता है।
- विषम मौसम परिस्थितियों में इन्हें उड़ाना मुश्किल होता है।

पशुओं के भोजन में अजोला का महत्व

डॉ. राजकुमार बेरवाल[1] एवं डॉ. मनीष कुमार सेन[2]

वर्तमान समय में दूध की बढ़ती हुई मांग पशुपालन व्यवसाय को लाभदायक बनाने के नई संभावनाओं का सृजन कर रही है। यद्यपि ठीक इसी समय हरे चारे की उपलब्धता में निरंतर कमी देखी जा रही है एवं वनों और चारागाहों का क्षेत्रफल घट रहा है। साथ ही फसलों के उत्पादन में कमी आ रही है जिससे पशु आहार में चारे की उपलब्धता पर्याप्त नहीं हो पा रही है। इन सब वर्तमान समस्याओं के समाधान के रूप में बहुत ही उपयोगी पौधे अजोला की खोज हुई है। अजोला एक जल मे तैरती हुई एक फर्न है इसमें नील हरित शैवाल सहजीवी के रूप में विद्यमान होता है इस नील हरित शैवाल को एनाबिना एरोली के नाम से जाना जाता है जो वातावरण की नाइट्रोजन के स्थायीकरण के लिए जिम्मेदार होता है, जो इस पौधे को बहुत ही विस्मयकारी और अद्भुत गुणों वाला बनाता है। इसमें उच्च मात्रा में प्रोटीन होता है और आवश्यक अमीनो एसिड, विटामिंस (विटामिन ए, विटामिन इ, विटामिन 12, बीटा कैरोटीन) और वृद्धि कारक मध्यस्थ अवयवम खनिज जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, पोटाश, लोहा, तांबा, मैग्नीशियम इत्यादि प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें शुष्क मात्रा के आधार पर 40 से 50% प्रोटीन , 10 से 15% खनिज, व 7 से 10% अमीनो अम्ल पाए जाते हैं। एजोला में कार्बोहाइड्रेट वसा की मात्रा कम होती है। इसकी संरचना इसे अत्यंत पौष्टिक एवं असरकारक पशु आहार बनाती है। अतः इसे पशुओं द्वारा आसानी से पचाया जा सकता है क्योंकि इसमें प्रोटीन की मात्रा अधिक व लिग्निनी की मात्रा कम होती है। पशु बहुत ही जल्द इसके अभ्यस्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त अजोला के उत्पादन की प्रक्रिया बहुत सरल हैं। दुधारू पशुओं में किए गए प्रयोगों से सिद्ध होता है कि पशुओं को इनके दैनिक आहार के साथ 1.5 से 2 किलोग्राम एजोला प्रतिदिन की दर से दिया जाता है तो दूध उत्पादन में 10 % वृद्धि होती है। इसलिए ऐसा माना जाता है कि अजोला में न केवल पौष्टिक तत्व बल्कि अन्य उपयोगी कारक जैसे कि कैरोटीन, पॉलीमर्स, प्रोबायोटिक्स भी पाए जाते हैं जो कि इसमें अप्रत्याशित वृद्धि दर को अंजाम देते हैं। कुकुट आहार के रूप में एजोला का प्रयोग करने पर ब्रायलर पक्षियों में औसत भार में वृद्धि एवं अंडा उत्पादन में वृद्धि पाई जाती है। एजोला को भेड़ बकरियों, सूअर एवं खरगोश को आहार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। मछली उत्पादन में भी यह अत्यंत वृद्धिकारक एवम् लाभदायक है

अजोला उत्पादन की विधिः–

1. एक छायादार जगह में 2 मीटर लंबा , 2 मीटर चौड़ा तथा पॉइंट 2 मीटर गहरा गड्ढा खोदना है।
2. इसे प्लास्टिक की सीट से ढक देना चाहिए सीमेंट की टंकी में भी इसे उगाया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में प्लास्टिक शीट बिछाना आवश्यक नहीं है जहां तक संभव हो पराबैंगनी किरणों को रोकने के लिए पर विरोधी प्लास्टिक शीट का प्रयोग करें। प्लास्टिक शीट, सिलपॉलिन एवं पॉलिथीन शीट प्रकाश की पराबैंगनी किरणों के लिए प्रतिरोधी क्षमता रखती हैं।
3. लगभग 10–15 किलोग्राम मिट्टी को गड्ढे में फैला देना चाहिए।
4. दो किलो गोबर एवं 30 ग्राम सुपर फास्फेट 10 लीटर पानी में मिलाकर गड्ढे में डालना चाहिए।
5. पानी का स्तर 10 सेंटीमीटर तक होना चाहिए।
6. 500 ग्राम से 1 किलोग्राम तक एजोला गड्ढे में डाल देना चाहिए।
7. अजोला बहुत ही तेजी से विकसित होता है और 10 से 15 दिन के अंदर पूरी गड्ढे में फैल जाता है। इसके बाद 800 से 1200 ग्राम एजोला प्रतिदिन बाहर निकाला जा सकता है।
8. प्रत्येक 5 दिन में 1 बार 20 ग्राम सुपर फास्फेट का लगभग 1 किलो गोबर गड्ढे में डालने से एजोला तेजी से विकसित होता है।
9. 1.5 से 2 किलो अजोला नियमित आहार के साथ प्रतिदिन पशुओं को खिलाया जा सकता है।

अजोला खिलाने की विधिः–

1. अजोला को खिलाने से पूर्व 1 सेंटीमीटर साइज के छेद किए हुए या छलनी में एकत्रित करना चाहिए ताकि पूरा पानी झर जाए।
2. छलनी को एक बाल्टी के ऊपर रखकर पानी से अच्छे से धोना चाहिए ताकि गोबर की गंद निकल जाए।

1. प्रभारी अधिकारी 2. टीचिंग एसोसिएट, पशु विज्ञान केन्द्र, सूरतगढ़, श्रीगंगानगर

3. बाल्टी में एकत्रित पानी को पुनः गड्ढे में डाल देना चाहिए
4. प्राप्त अजोला को दाने के साथ मिलाकर पशु को खिलाना चाहिए।

अजोला खिलाने के लाभः–

1. इसे उत्तम पौष्टिक आहार के रूप में विकसित किया जा सकता है।
2. इसे लगाना बहुत ही आसान है इसे घर में छत पर बाड़ी में किसी भी चाय दास्तान पर लगा सकते हैं।
3. यह पशुओं के साथ–साथ मुर्गियों का भी उत्तम आहार है।
4. दूध उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ पशु के शारीरिक विकास के लिए भी अजोला बहुत उपयोगी आहार माना गया है

अजोला उत्पादन में ध्यान रखने वाली सावधानियांः–

1. अजोला की बढ़त और दोगुना होने का न्यूनतम समय बनाए रखने हेतु आवश्यक हो जाता है कि अजोला को प्रतिदिन उपयोग के लिए बाहर निकाला जाए (लगभग 200 ग्राम प्रति वर्ग मीटर के अनुसार)।

2. समय–समय पर गाय का गोबर सुपर फास्फेट डालते रहना चाहिए ताकि फर्ण तीव्र गति से वृद्धि करता रहे।
3. अजोला तैयार करने के लिए उपयुक्त तापमान 30 डिग्री सेंटीग्रेड होता है। इससे अधिक तापमान बढ़ने पर रोकना चाहिए और एजोला का स्थान छायादार होना चाहिए।
4. अजोला तैयार करने की टंकी में पीएच का समय–समय पर परीक्षण करना चाहिए। उचित पीएच 5.5 – 7.0 के बीच होनी चाहिए।
5. हर 30 दिनों के अंतराल में एक बार अजोला तैयार करने की टंकी की लगभग 5 किलो मिट्टी ताजा मिट्टी से बदल देना आवश्यक है ताकि नाइट्रोजन की अधिकता एवं अन्य लघु खनिजों की कमी होने से बचाया जा सके।
6. प्रति 10 दिनों के अंतराल में एक बार अजोला तैयार करने की टंकी से 25 से 30% ताजे पानी से बदल देना चाहिए ताकि नाइट्रोजन की अधिकता होने से बचाया जा सके।
7. हर छह माह के अंतराल में एक बार अजोला तैयार करने की टंकी को पूरी तरह से खाली कर साफ करना चाहिए ताकि नए सिरे से पानी, गोबर, एजोला कल्चर डालना चाहिए
8. अजोला का उपयोग से पहले ताजे साफ पानी से अच्छे से धोना चाहिए ताकि गोबर की गंध निकल जाए

अजोला के विकास की धीमी गति होने का आमतौर पर दो कारण हो सकते हैं

1. फास्फोरस की कमी 2. अधिक सूर्य का प्रकाश

नोटः– फास्फोरस की कमी से निपटने के लिए प्रति सप्ताह 5 किलो प्रति हेक्टेयर मोनो अमोनियम फास्फेट या सुपर फास्फेट डालना चाहिए। प्रकाश की अधिकता से अजोला भूरा या लाल रंग का हो जाता है क्योंकि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया ठीक प्रकार से नहीं हो पाती जिससे एजोला की विकास की गति धीमी हो जाती इन बातों का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए ।

अजोला के मुख्य कारकः–

1. तापमान– 25 से 30 डिग्री सेल्सियस
2. पी.एच.– 5.5–7.0
3. जल की गहराई– 5– 12 इंच
4. लवणता – 90– 150
5. अपेक्षिक आद्रता– 65–.80%

नोट :– जब किसान भाई किसी पशु को अजोला खाने में दें तो सर्वप्रथम अजोला को पानी से छान कर निकाल दें तथा पुनः दो–तीन बार उसे साफ पानी से धो लें। उसके बाद उससे पानी जब निकल जाए तब पशु को खाने के लिए दें। इसका उत्पादन करने के लिए अक्टूबर से मार्च महीना सर्वोत्तम माना गया है क्योंकि अप्रैल–मई, जून महीने में अजोला उत्पादन कम हो जाता है लेकिन छाया का इंतजाम कर दिया जाए तो अजोला अन्य महीनों में भी उत्पादन किया जा सकता है।

अजोला में पोषक तत्वः–

1.	प्रोटीन	15 –25%
2.	फाइबर	12–15%
3.	कैल्शियम	1–2%
4.	फास्फोरस	0.35–0.5%
5.	पोटेशियम	2–2.5%

पशुओं को अजोला खिलाने की मात्रा

1.	गाय, भैंस	1.5–2 किलो प्रतिदिन
2.	भेड़, बकरी	300–500 ग्राम प्रतिदिन
3.	मुर्गी	20–30 ग्राम प्रतिदिन

अगस्त माह के कृषि कार्य

डॉ. पी.एस. शेखावत, निदेशक अनुसंधान,
स्वा. के.रा.कृ.वि. बीकानेर

सस्य विज्ञान

1. **बाजराः** (1) **बीज एवं बुआई** के लिये 4 किलोग्राम प्रति हैक्टर प्रमाणीकृत एवं उपचारित बीज लेवें। कतार से कतार की दूरी 45–60 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15–20 से.मी. रखे। बीज 5 से.मी. से गहरा न डालें। **(2) उर्वरकः** सिंचित फलस के लिये 60 किलोग्राम नत्रजन तथा 40 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर उपयुक्त है। आधा नत्रजन तथा सम्पूर्ण फास्फोरस बुआई के समय ड्रिल कर 10 से.मी. गहराई पर डाले। शेष आधी मात्रा बुआई के 25–30 दिन बाद खड़ी फसल में डालें। **(3) बाजरे की उन्नत किस्में**:–एच.एच.बी.–67 (60–62 दिन), एच.एच.बी.–60 (70–72 दिन), एच.एच.बी.–226, एच.एच.बी.–234, एमपीएमएच–17, राज–171 (एम.पी.–171), आर.एच.बी.–90, आर.एच.बी.–121 पूसा–605, आई.सी.एम.एच.–356, आरएचबी–177 ।

2. **मोठः–(1) बीज एवं बुआईः** शुद्धफसल हेतु 12 – 15 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टर बोएं। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. और पौधे से पौधे की दूरी 15–20 से.मी. रखें। **(2) उर्वरक** : मोठ की फसल के लिये 20 किलोग्राम नत्रजन तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर पर्याप्त है। **(3) मोठ की उन्नत किस्में**: (अ) आर.एम.ओ.–225 (ब) आर.एम.ओ.–435 (स) आर.एम.ओ.–423 (द) आर.एम.ओ.–40 (इ) आर.एम.ओ.–257, (फ) आर.एम.ओ. –2251।

3. **ग्वार** :–(1) **बीज एवं बुआईः** ग्वार फसल के लिये 20 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर सिंचित क्षैत्र के लिये तथा असिंचित क्षैत्र के लिये 16 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर डालें। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखें। **(2) उर्वरकः** इस फसल में 20 किलोग्राम नत्रजन तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर काम में लेवें। **(3) उन्नत किस्में** :(अ) एच.जी.–75 (ब) आर.जी.सी.–936 (स) आर.जी.सी.–197 (द) आर.जी.सी.–986 (इ) आर.जी.सी.–1003 (फ) आर.जी.सी.–1017 (जी) आर.जी.सी. –1002, (एच) आरजीसी–1066, (आई) आरजीसी–1031

4. **तिलः (1) बीज एवं बुआई** : बुआई का समय : 15 जून से 15 जुलाई । शाखाओं वाली किस्मों जैसे टाइप–13 व टी.सी.–25 हेतु 2 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर, कतार से कतार 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. रखें। शाखा रहित किस्मों में कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखें। ऐसी किस्मों में बीज 4–5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर डालें। **(2) उर्वरक** : निश्चित वर्षा वाले क्षेत्र में 40 किलोग्राम नत्रजन तथा 30 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर दें। आधा नत्रजन तथा सम्पूर्ण फास्फोरस बुआई के समय ड्रिल करें। **शेष नत्रजन**– बुआई के 30–35 दिन बाद खड़ी फसल में देवें। **(3) उपयुक्त किस्में** : (अ) आर.टी.–46 (ब) आर.टी.–125 (स) आर.टी.–127 ।

5. **मूँग** :–**(1) बीज एवं बुआई** : 15–20 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. रखें। **(2) उर्वरक** : 20–25 किलोग्राम नत्रजन तथा 40 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर डालें।**(3) उन्नत किस्में**: (अ) एम.यू.एम.–2 (ब) आर.एम.जी.–62 (स) आर.एम.जी–268 (द) के.–851 (इ) एस एम एल–668, (फ) एम.एच. 421, (ग) आई पी एम 02–03, आर.एम. 6–492।

6. **अरण्डी** :–**(1) उपयुक्त किस्में**: (अ) अरुणा (ब) आर.एच.सी. –1 (स) गोच–1 (द) जी.सी.एच.–4 (य) आरजीएच–5 **(2) बुआई का समय** : जुलाई का महिना।**(3) बीज की दर** : 3 किलोग्राम प्रति बीघा **(4)उर्वरकः** 80 किलोग्राम नत्रजन व 50 किलोग्राम फास्फोरस (प्रति हैक्टेयर) नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा बुआई पूर्व डालें। नत्रजन की शेष मात्रा दो भागों में प्रथम सिंचाई पर 35 दिन में व दूसरी 90 दिन पर देवें।(5) कतार से कतार की दूरी : 90 से.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 60 से.मी. रखें।

7. **गन्नाः– सिंचाई** :–10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करें। **निराई–गुडाई** :– जुलाई के अन्तिम सप्ताह में जड़ो के आस–पास मिट्टी चढ़ा देनी चाहिये।

8. **मूंगफली : सिंचाई** :–प्रथम सिंचाई बुवाई के 25–30 दिन के बाद की जानी चाहिए। **निराई–गुडाई** :– फूल आने से पहले निराई गुड़ाई कर देवें तथा फूल आने के बाद निराई–गुड़ाई न करें।

पौध व्याधि

बाजरा :– इस फसल को अरगट (गुन्दिया) या चेपा रोग से बचाने हेतु बुआई से पूर्व बीज को नमक के 20 प्रतिशत घोल (1 कि.ग्रा./5 लीटर पानी) में पाँच मिनट तक डूबोकर हिलायें। तैरते हुये बीज एवं कचरे को निकालकर जला दें। शेष बचे बीजों को साफ पानी से धोकर अच्छी तरह छाया में सुखा लें। तत्पश्चात् थाइरम नामक दवा 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से बीजों को उपचारित कर बुआई करें, फसल चक्र अपनावें, समय पर बुआई करावें, देर से बुआई करने पर रोग अधिक लगता है। रोग के लक्षण बालियाँ आने की अवस्था पर ही देखे जा सकते हैं। **मृदुरोमिल/तुलासिता रोग**– यह रोग पौधे की छोटी अवस्था में ही देखा जा सकता है। दो तरह के लक्षण प्रकट होते हैं। प्रथम अवस्था में पत्तियों पर एवं बाद में बालियों पर दिखाई देता है। दानों की जगह हरी पत्तियाँ दिखाई देती हैं। पत्तियाँ आंशिक/पूर्णतः पीली या सफेद हो जाती हैं, देर से निकलने वाली पत्तियाँ पहले वाली पत्तियों की अपेक्षा अधिक पीली होती हैं, पत्तियों पर पीली धारियां बन जाती हैं। नम वातावरण में रोगग्रस्त पत्तियों के निचले सिरे में आसिता के सफेद तंतु देखे जा सकते हैं। जुलाई माह के अन्तिम सप्ताह में यह लक्षण दिखाई दे जाते हैं। प्रथम संक्रमण मृदा में पड़े गत वर्ष के रोगग्रस्त पत्तों के कारण होता है। द्वितीय फैलाव वायु एवं कीटों द्वारा होता है। **रोकथाम** :–(1) बुआई से पूर्व बीज को थाइरम 3 ग्राम या एप्रोन एस.डी. 6 ग्राम/किलो बीज की दर से उपचारित करें। (2) साफ एवं प्रमाणित बीज ही बोना चाहिये। (3) फसल चक्र अपनावें, (4) रोग के प्रथम लक्षण दिखाई पड़ने पर मैंकोजेब (डी.एम.–45) 2 ग्राम/लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। (5) रोग

अवरोधक किस्में :– आर.सी.बी.–2, एम.एच.–179, एच.एच.बी.–67 डब्ल्यू.सी.सी.–75, राज–171।

मूंगफली :–(1) टिक्का रोग:–यह रोग सरकोस्पोरा एरेचिडीकोला एवं स.परसोनाटा नामक दो कवकों द्वारा फैलता है। रोग के लक्षण वातावरण में नमी, आद्रता बढ़ने पर देखें जा सकते हैं। दोनों कवकों के लक्षण भिन्न–भिन्न होते है। **(अ)** स.एरेचिडीकोला – अगेती पर्ण चित्ती, बड़े धब्बे, गोलाकर व अनियमित आकार, व्यास–1–10 एम.एम. ऊपरी सतह पर। **(ब)** स.परसोनाटा – पछेती पर्ण चित्ती, धब्बे छोटे, गोलाकार, व्यास 1–6 एम.एम. गहरे भूरे एवं काले रंग के, ऊपरी एवं निचली दोनो सतहों पर। कवक संक्रमण प्रायः बाहरी त्वचा की कोशिकाओं के वेधन अपग रन्ध्रों द्वारा प्रवेश से होता है। पछेती पर्ण चित्ती हानिकारक होती हैं। **रोकथाम:**–प्रकोप शुरु होते ही मैंकोजेब 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करें। अधिक नाइट्रोजन, फास्फोरस युक्त खाद देने से रोग बढ़ता है तथा पोटाश के प्रयोग से रोग की उग्रता में कमी आती है। **(2) शिखर विगलन, कालर रोट, क्राउन रोट:**–मृदोढ़ एवं बृजोढ़ बुआई के 20–30 दिन के अन्दर लगता है। यह रोग एस्परजीलस नाइजर नामक कवक द्वारा फैलता है। पौघा अचानक मुरझाकर मर जाता है। मुरझाये हुये पौधे को उखाड़ कर देखने पर तना जहां से भूमि से बाहर निकलता है, उस जगह काला पड़ जाता है तथा जड़े भी काली पड़ जाती है। **रोकथाम :–** खड़ी फसल में रोकथाम हेतु एम.ओ.पी. या जिंक सल्फेट 6 कि.ग्रा. प्रति बीघा की दर से बिखेर कर गुड़ाई करके सिंचाई करें।

कपास एवं नरमा:–ब्लेक आर्म (जीवाणु अंगमारी) रोग :– जेन्थोमोनास मालवेशियरम नामक जीवाणु द्वारा होता है। सर्वप्रथम बीज पत्रों की निचली सतह पर छोटे जलीय धब्बे प्रकट होते हैं। ये धब्बे धीरे–धीरे बढ़कर अनियमित आकार के धब्बे बनाकर बीजपत्रों को सुखाकर नष्ट कर देते हैं। धब्बों का रंग भूरे से काला हो जाता है। बीजपत्रों को रोगग्रस्त करने के बाद तने को ग्रस्त करता हुआ पौधों की वर्धन–शिखा तक पहुँच जाता है। जिससे पौधे की मृत्यु हो जाती है। उग्र संक्रमण से तने पर गहरी काली दरारें पड़ जाती हैं। जिससे पौधे की मृत्यु हो जाती है एवं शाखाओं का रंग काला हो जाता है। **रोगचक्र :–** रोग का प्राथमिक निवेश द्रव्य कुछ घासों, रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों तथा रोगी बीजों के द्वारा मुख्य फसल में पहुँचता है। द्वितीयक निवेश द्रव्य का प्रसार वायु एवं पानी से होता है। टिण्डों के संक्रमण में कीट सहायक होते हैं। **रोकथाम :– (1)** खरपतवारों एवं रोगी अवशेषों को नष्ट करें। **(2)** फसलचक्र, देर से बुवाई, अच्छी निराई–गुड़ाई, समय पर सिंचाई एवं मृदा में पोटाश का प्रयोग से यह रोग कम हो जाता है। **(3)** रोग के लक्षण दिखते ही 5–10 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन, 250–300 ग्राम सी.ओ.सी. (1000पी.पी.एम.) के घोल का छिड़काव 60 दिन, 80 दिन व 100 दिन बाद करना चाहिए।

मूंग व मोठ :– जुलाई में बोये जाने वाले बीजों को 2 ग्राम थाइरम/किलो की दर से उपचारित करें। मोठ की उन्नत किस्में आर.एम.ओ.–40, 257 (विषाणुरोधी), मूंग की के.–851, एसएमएल–668 की बुवाई करावें।

ग्वार :–(1) जड़ सड़न रोग :– रोग के कारण पौधों की जड़े काली पड़ जाती है तथा पौधा छोटी अवस्था में ही मर जाता है। रोकथाम हेतु बुआई से पूर्व बीजों को थाइरम या टोपसीन एम.–2 ग्राम/किलो की दर से उपचारित करें।(2) अंगमारी अथवा झुलसा रोग :– जैन्थोमोनास जीवाणु जनित रोग, रोकथाम हेतु बुवाई से पूर्व प्रति कि.ग्रा. बीज को 250 पी.पी.एम. (2.5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) स्ट्रेप्टोसाइक्लीन के घोल में 2 घण्टे भिगोकर उपचारित करें।

तिल :– जड़ सड़न रोग से बचने हेतु बुआई से पूर्व थाइरम अथवा केप्टान 3 ग्राम/किलो बीज से उपचारित करें। जीवाणु अंगमारी से बचाने हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 2 ग्राम/10 लीटर पानी का घोल बनाकर बीज को उपचारित कर बुआई करें। किस्में–आर.टी.–103, 105, 46।

कीट विज्ञान

नरमा :– दूसरा छिड़काव :–समय : जुलाई के तीसरे सप्ताह से अगस्त का प्रथम सप्ताह। **कीट** : चेपा, सफेद मक्खी, हरा तेला। **रसायन** : डाइमेथोएट 30 ई.सी. या मेलाथियान 50 ई.सी. 60 लीटर पानी के साथ 300 मि.ली. कीटनाशी प्रयोग में लें। यदि चित्तीदार लट का प्रकोप हो तो क्युनाल्फॉस 25 ई.सी. 2.0 मिलीलीटर या इन्डोक्साकार्ब 14.5 एस सी 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर प्रयोग में लें। **देशी कपास :– दूसरा छिड़काव :– समय** : जुलाई के अन्तिम सप्ताह से अगस्त के प्रथम सप्ताह तक। **कीट** : गुलाबी लट, चित्तीदार लट **रसायन** : क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 250 मिलीलीटर प्रति बीघा प्रति बीघा 60 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। **बाजरा :– बीजोपचार** :– दीमक के बचाव हेतु क्लोरोपाइरीफोस 4 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें। दीमक व सफेद लट के प्रकोप से बचने के लिए क्लोरोपाईरिफॉस 20 ई. सी. 4 लीटर प्रति हैक्टर या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 500 मिली प्रति हैक्टर की दर से सिंचाई के पानी के साथ देवें। **गन्ना** : गन्ने में तना छेदक की रोकथाम के लिए फ्यूराड़ान 3 प्रतिशत कण 6 किग्रा या क्लोरोपाईरिफॉस 10 जी कण 5 किलो प्रति बीघा की दर से डालें। पाईरीला कीट के प्रकोप से बचने के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. 300 मिली या डायमिथोऐट 30 ई.सी. 250 मिली प्रति बीघा की दर से छिड़काव करें या ऐपिरिकेनिया नामक परजीवी के1500 कोकून प्रति बीघा की दर से पौधों की ऊपरी पत्तियों के मध्य की जगह में सोख दें। **ग्वार** : ग्वार की फसल में रस चूसक कीटों जैसे हरा तेला, सफेद मक्खी व चैंपा के प्रकोप से बचने के लिए डाईमिथोएट 30 ई.सी. की एक लीटर मात्रा का प्रति हैक्टर या थायोमेथोक्जाम 25 डब्ल्यू.जी. 0.50 मिली प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें। **तिल** :तिल की फसल में पत्ती लपेटक लट के नियन्त्रण के लिए क्यूनालफॉस 25 ई.सी. की एक लीटर मात्रा का प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

मार्गदर्शक : डॉ. सुभाष चन्द्र, निदेशक प्रसार शिक्षा, **सम्पादक** : डॉ. (श्रीमती) सीमा त्यागी, एटिक प्रभारी **सहयोग** : सतीश सोनी, सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर